Volume: 1 Issue: 16 Pages: 49-52
International Journal of Research in Academic World
E-ISSN: 2583-1615
Impact Factor: 4.714
Received: 04/November/2022 Int. J Res. Acad. World. 2022; 1(16):49-52 Accepted: 06/December/2022

प्राचीन भारत में पुरातत्व के संदर्भ में अभिलेखों की भूमिका का वर्णन

*[1]डॉ0 अनिल कुमार यादव

*[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास, संस्कृति, पुरातत्व विभाग पी0जी0 कालेज, पट्टी, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उदेद्श्य प्राचीन भारत में पुरातत्व के अन्तर्गत आने वाले अभिलेखों के माध्यम से इतिहास को जानने का प्रयास करते हैं जहां पर साहित्य मौन हो जाता है। तो भारतीय सस्कृति को अभिलेखों के विविध आयामों जैसे–धर्म, दर्शन, राजनीति, कला, स्थापत्य और अर्न्तराष्ट्रीय सम्बन्धों में दिखाई पड़ता है और मानव चेतना एवं स्मृतियों का जीवित इतिहास है इन स्मृतियों को जीने की तथा भावी पीढ़ी को हस्तानान्तरित करने की स्वाभाविक चेतना मानव प्रजाती में होती है।

मुख्य शब्दः अभिलेख, प्रयाग प्रशस्ति, समुद्रगुप्त, ऐहोल

प्रस्तावना

भारतीय इतिहास के विविध पक्षों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए अभिलेख प्रमाणित होते हैं। अंग्रेजी भाषा के इंसक्रिप्शन ;प्देबतपचजपवदद्ध शब्द का हिन्दी–रूपान्तर है, जिसका अर्थ उत्कीर्ण लेख होता है। अभिलेख के अन्तर्गत उन सभी प्राचीन लेखों की गणना कर ली जाती है, जो पत्थर, धातु, मिट्टी की ईंटों, शंख, हाथी दांत के फलक पात्रों, लकडी तथा दीवारों आदि पर उत्कीर्ण है। इतिहास–सरंचना में अभिलेख सर्वाधिक प्रामाणिक और विश्वनीय स्रोत सिद्ध होते है, क्योंकि अभिलेख समकालीन होते है। जिस राजा अथवा राज्य के सम्बन्ध में अभिलेख उत्कीर्ण होता है, अभिलेख–रचना प्रायः उसी राजा के शासनकाल में की गयी होती है। साहित्य में वर्णित घटनाओं में अतिरंजना और क्षेपकों की सम्भावना अधिक होती है, परन्तु अभिलेख की प्रामाणिकता में किसी प्रकार का सन्देह नही होता है।

विंसेण्ट स्मिथ ने भारतीय इतिहास पर प्रकाश डालने वाले स्रोतों में अभिलेखों को सर्वाधिक प्रामाणिक और महत्वपूर्ण माना है। डॉ0 दिनेशचन्द्र सरकार का भी मानना है कि इतिहास की पुनर्संरचना में प्राचीन भारतीयों के विषय में जानने के लिए अभिलेखीय साक्ष्य महत्वपूर्ण होते है। अभिलेख इतिहास–सरंचना में दो प्रकार से अपनी भूमिका का निर्वाह करते है। प्रथमतः तो ये इतिहास के ऐसे प्रसंगों को प्रकाश में लाते है, जो अन्य स्रोतों से अज्ञात थे, जैसे खारवेल का हाथी गुम्फा अभिलेख, समुद्रगुप्त की प्रयाग–प्रशस्ति, रूद्रामन का जूनागढ अभिलेख आदि तथा द्वितीयतः अन्य स्रोतों से ज्ञात इतिहास–प्रसंगों का समर्थन कर उन्हें विश्वसनीय और असन्दिग्ध प्रदान करते है। इस प्रकार अभिलेख इतिहास जानने के सर्वाधिक पुष्ट प्रमाण है।भारत में अभिलेख गुहाओं, स्तम्भों, शिलाओं, मूर्तियों, प्राचीरों, पात्रों, धातु–पत्रों और मुद्रओं आदि पर प्राप्त हुए है। राजनीतिक इतिहास के निर्माण के साथ ही सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, साहित्यिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए अभिलेखों का अत्यधिक महत्व है।

राजनीतिक महत्व

राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से अभिलेख अत्यधिक महत्वपूर्ण होते है। कुछ राजवंशो का ज्ञान तो मात्र अभिलेखों से ही होता है। खारवेल के हाथी गुम्फा अभिलेख के अभाव में कलिंग के चेदि राजवंश के विषय में हम कुछ भी न जान पाते। इसी प्रकार शक, सातवाहन, गुप्त, उत्तरगुप्त, मौखरि, राष्ट्रकूट, पल्लव, और चोल आदि प्रसिद्ध राजवंशों के इतिहास पर अभिलेख विस्तृत जानकारी देते है।

अभिलेख उत्तराधिकार–क्रम और तिथिक्रम की समस्या का भी समाधान करते है। गुप्त और उत्तर गुप्त राजाओं का क्रम अभिलेखें से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर निश्चित किया जाता है। महत्वपूर्ण तिथियों की जानकारी भी अभिलेखों से प्राप्त हुई है। अभिलेखों से ही 57 ई0 पूर्व से विक्रम् सम्वत् की काल–गणना का आरम्भ होने का ज्ञान होता है। इसी प्रकार 78 ई0 से प्रारम्भ होने वाले शक सम्वत् का तथा 319–20 ई0 से गुप्त सम्वत् का ज्ञान हमें अभिलेखों से ही होता है। कनिष्क से लेकर वासुदेव तक के लेख एक क्रम से 3 से 98 तिथि, नहपान का जूनार अभिलेख 46वें और रूद्रमान का जूनागढ लेख 72वे वर्ष में उत्कीर्ण है, ये सभी शक सम्वत् की तिथियाँ है। इसी प्रकार विलसद अभिलेख (96 गुप्त सम्वत्) से कुमार गुप्त प्रथम, जूनागढ अभिलेख (136, 137, 138 गुप्त सम्वत्) से स्कन्दगुप्त तथा मथुरा लेख (61 गुप्त संवत्) से चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन–काल का निर्धारण किया जा सकता है। कुमार गुप्त प्रथम के मन्दसोर अभिलेख (493 तथा 529 वि0स0) तथा यशोधर्धन के अभिलेख (589 वि0स0) से विक्रम सम्वत् की तिथियों का ज्ञान होता है। इसी प्रकार हर्ष के लेख से 606 ई0 में प्रचलित हर्ष संवत् की जानकारी होती है।

अभिलेखों से राजाओं की व्यक्तिगत रूचियाँ, चरित्र उपलब्धियाँ तथा जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का भी ज्ञान होता है। अशोक के अभिलेख उसके विषय में इतनी अधिक सूचनाएँ देते हैं कि उन्हें अशोक की आत्मकथा कहना सही प्रतीत होता है। अशोक के अनेक अभिलेख भारत के एक स्थान से दूसरे स्थान तक बिखरे मिले है। इन अभिलेखों से उसकी साम्राज्य सीमा के निर्धारण के साथ ही उसके धर्म और प्रशासन सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण विषय की जानकारी होती है। अशोक के अभिलेख शिलालेख, लघु–शिलालेख स्तम्भ लेख, ल्घु स्तम्भलेख, गुहालेख–आदि प्रकार के है। गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त की महान् उपलब्धियों का ज्ञान हमें प्रयाग प्रशस्ति के माध्यम से होता है, जो इलाहाबाद में एक स्तम्भ

*Corresponding Author: डॉ0 अनिल कुमार यादव

लेख के रूप में उपलब्ध है। प्रयाग–प्रशस्ति में समुद्रगुप्त के विषय में कहा गया है कि वह विद्वानों और विद्या का उदार संरक्षक, कविराज, वीणा बजाने में तुम्बरू नारद आदि को लज्जित करने वाला था। उसे वीर, दयालु, कृपण, दीन–अनाथ और आतुर मनुष्यों के उद्धार के लिए सदैव कटिबद्ध रहने वाला बताया गया है। इसी भाँति गौतमी बलश्री के नासिक गुहाभिलेख में गौतमीपुत्र सातकर्णी की सामरिक विजयों के साथ यह भी उल्लिखित है कि वह अत्यन्त रूपवान, बलिष्ठ, मातृ–भक्त, गुणियों आश्रयदाता, करूणा युक्त, ब्राह्मण धर्म का पुनरूत्थान करने वाला प्रजावत्सल आदर्श राजा था। जूनागढ अभिलेख रूद्रदामन के विषय में अनेक सूचनाएँ देता है। उसकी साम्राज्य–सीमा विस्तृत थी। वह प्रजावत्सल था। प्रजा के कल्याणार्थ उसके द्वारा सुदर्शन झील के बाँध का पुनर्निर्माण करना उसके शासन काल की महत्वपूर्ण घटना थी।

अभिलेखों के माध्यम से साम्राज्य की सीमाएँ भी निर्धारित की जाती है। अभिलेख के प्राप्ति स्थल और अभिलेख में वर्णित स्थलों के आधार पर किसी राजा के साम्राज्य–विस्तार का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। अशोक के अभिलेख उसके साम्राज्य के भीतरी भागों में और सीमाओं से प्राप्त हुए है, जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि उसका साम्राज्य पूर्व में कलिंग से लेकर पश्चिम में काठियावाड तक और उत्तर में नेपाल की तराई से लेकर दक्षिण में कर्नाटक तक विस्तृत था। उसके अभिलेखों में उसके साम्राज्य की दक्षिणी सीमाओं के बाहर के राज्यों का भी उल्लेख मिलता है। इसी भाँति रूद्रदामन के जूनागढ, समुद्रगुप्त की प्रयाग–प्रशस्ति और नासिक गुहाभिलेख से गौतमी पुत्र सातकर्णी के राज्य की सीमाओं का भी का वर्णन करते है। हाथीगुम्फा और प्रयाग प्रशस्ति से क्रमशः प्रशस्ति से क्रमशः खारवेल और समुद्रगुप्त की विजय–यात्राओं का वर्णन मिलता है। कुमार गुप्त प्रथम के मन्दसौर अभिलेख में उसमें साम्राज्य के सीमाओं का वर्णन मिलता है। राष्ट्रकूट से राजाओं की समकालीनता का भी ज्ञान होता है। हाथी गुम्फा अभिलेख से खारवेल और सातकर्णी का समकालीन होना सिद्ध होता है। मन्दसोर अभिलेख से खारवेल और सातकर्णी का समकालीन होना सिद्ध होता है। मन्दसोर अभिलेख में मिहिरकुल को यशोवर्मा का समकालीन बताया गया है। एहोल अभिलेख पुलकेशिन द्वितीय और हर्षवर्धन की संकालीनता पर प्रकाश डालता है। अशोक के दूसरे और तेरहवें शिला प्रज्ञापनों में एण्टिओकस द्वितीय और अलेक्जेण्डर नामक समससामायिक यूनानी शासकों के नाम दिये गये है।

अभिलेखो से राजाओं की शासन–व्यवस्था के बारे में उल्लेखनीय जानकारी मिलती हैं। अशोक के अभिलेखों में उसके शासन के अनेक पदाधिकारियों जैसे–युक्त, राजुक और धर्ममहामात्र का उल्लेख हुआ है। अशोक के पानगुडारिया से प्राप्त नवीन शिलालेखों से यह जानकारी मिलती है कि उक्त स्थान पर नियुक्त अपने वायसराय साम्ब को उसने विशेष आदेश दिया था। समुद्रगुप्त की प्रयाग–प्रशस्ति राजतंत्रों और गणतंत्रों का वर्णन करती है। स्कन्दगुप्त का जूनागढ अभिलेख काठियावाड के उपरिक पर्णदत्त का उल्लेख मिलता है। रूद्रदामन के जूनागढ अभिलेख में मतिसचिवों और कत्तसचिवों की चर्चा हुई है। चोल अभिलेखों में स्थानीय शासन का सुन्दर वर्णन मिलता है। गुप्त अभिलेखों में सन्धिविग्रहिक, कुमारामात्य, महादण्डनायक, महाबलाधिकृत आदि अनेक पदाधिकारियों का उल्लेख हुआ है।

अभिलेखों से कर व्यवस्था पर भी प्रकाश पडता है। रूम्मिनदेई लघु अभिलेख में धर्मकर की चर्चा है। अशोक ने बुद्ध के जन्म–स्थान लुम्बिनी ग्राम का कर घटाकर उसे 1/8 कर दिया था। रूद्रदामन का जूनागढ अभिलेख कर और बेगार का उल्लेख करता है।

सामाजिक महत्व

अभिलेख तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था का वर्णन करते है। अशोक के अभिलेखों संयुक्त कुटुम्ब–प्रणाली, पुत्रजन्म, परदेशगमन, पुत्र–पुत्रियों के विवाह के अवसर पर किये जाने वाले मांगलिक कार्यों आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है। अशोक के अभिलेखों (तृतीय, चतुर्थ, और अष्टम शिलालेख) में उल्लेख मिलता है कि उस समय ब्राह्मण, श्रमणों तथा अन्य धार्मिक सम्प्रदायों के प्रति शासकों के मन में उदार भाव रहता था। अशोक के अनेक समाजोपयोगी कार्यों का विवरण अभिलेखों में दिया गया है। वृक्षारोपण, कूप–खनन, औषधालयों का निर्माण, प्याऊ, विश्रामगृह आदि बनवाना अशोक के सामाजिक जीवन को स्पष्ट करता है। ये सभी जानकारी उसके अभिलेखों के माध्यम से होती है। अभिलेखो से संयुक्त शासन का उल्लेख मिलता है छत्रप शासन प्रणाली के पिता–पुत्र एक साथ शासन करते थे। अन्धों अभिलेख में चष्टन उसके पुत्र जयदामन का उल्लेख मिलता है। कशमीर में रानी रिद्वा–क्षेमगुप्त संयुक्त शासन करते थे। हाथीगुम्फा अभिलेख खारवेल के द्वारा प्रजा के मनोंविनोद के लिए 35 लाख मुद्रा–व्यय करना, अनेक उत्सवों समाजों का आयोजन आदि का वर्णन करता है। नासिक गुहालेख गौतमीपुत्र को चातुर्वण्यों से संकर को रोकने वाला, अन्त्यजों, शुद्रों और निम्न जातियों के परिवारों का पालन करने वाला पालनहार बतलाता है।

गुप्त अभिलेखों से ज्ञात होता है कि उस समय ब्राह्मणों को आदर की दृष्टि से देखा जाता था तथा भूमि और अग्रहार देने का उल्लेख है। कई गोत्रों का उल्लेख अभिलेखों में मिलता है, जैसे–भारद्वाज, भार्गव, आत्रेय, गौतम, वत्स, कश्यप, कण्व आदि। ब्राह्मण अपने गोत्र, और 'वेद' से पहचाने जाते थे। कुछ ब्राह्मण मंत्रियों का भी उल्लेख मिलता है। 510 ई0 के भानुगुप्त के एरण अभिलेख से उस समय समाज में सतिप्रथा के अस्तित्व का भी संकेत मिलता है। गुप्त–अभिलेखों में संयुक्त परिवार, संस्कार, भोजन, पेय, वस्त्र–आभूषण, मनोरंजन तथा रहन–सहन के अनेक तौर–तरीकों का उल्लेख हुआ है। कुमारगुप्त के मन्दसोर अभिलेख में स्त्रियों द्वारा सुवर्णहार, ताम्बूल, पुष्पसज्जा तथा रेशमी वस्त्र धारण करने का उल्लेख है।

गुप्तोत्तर अभिलेखों में भी समाज में ब्राह्मणों की श्रेष्ठता, दान, वर्णव्यवस्था आदि का उल्लेख है। ईशानवर्मा के हरहा अभिलेख में आदित्य वर्मा को वर्णाश्रम व्यवस्था को संस्थापित करने वाला कहा गया है। अभिलेखों में शिक्षा, न्याय, विवाह आदि की भी चर्चा प्राप्त होती है।

आर्थिक महत्व

अभिलेखों से तत्कालीन आर्थिक व्यवस्था और स्थिति का भी ज्ञान होता है। अभिलेखों से ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत में जल और स्थल दोनों मार्गों से व्यापार होता था। कनिष्क के सारनाथ प्रतिमा लेख में वाराणसी को एक व्यापारिक केन्द्र बताया गया है। अनेक बन्दरगाहों का भी उल्लेख अभिलेखों में हुआ है। जैसे नासिक गुहालेख में भरूकच्छ (भडौच) गोवर्धन (नासिक) और शोर्पाखा (सोपारा) का उल्लेख हुआ है। गुप्तकालीन अभिलेखों में सार्थवाहों की चर्चा मिलती है, जो व्यापारियों के दलों का नेतृत्व करते थे। चाहमान अभिलेखों में उन्हें वाणाजारक या बनजारा कहा गया है। अनेक अभिलेखों में श्रेणियों और उनकी कार्यपद्धितयों का उल्लेख भी मिलता है। नहपान के 120 ई0 के नासिक अभिलेख से ज्ञात होता है कि श्रेणियाँ बैंको का कार्य करती थीं। अभिलेख से ज्ञात होता है कि उषवदात द्वारा गुहा–निवासी भिक्षुओं के लिए तीन हजार कार्षापण दानकर दिये गये थे। यह धनराशि दो जुलाहों की श्रेणियों में 1 प्रतिशत और 3/4 प्रतिशत मासिक व्याज की दर से जमा की गयी थी। ईश्वर सेन के शासन के 9 वें वर्ष में अंकित नासिक के ही एक दूसरे अभिलेख में कुलरिकों (कुम्हारों) की श्रेणियों में एक हजार कार्षापण, ओदयंत्रिकी की श्रेणी में दो हजार कार्षापण, कुछ धन तेलियों की श्रेणी में और 500 कार्षापण किसी अन्य श्रेणी में जमा किये जाने का उल्लेख है। जुन्नार के तीन अभिलेखों और नागार्जुनीकोंडा के 333 ई0 के अभिलेख में विभिन्न श्रेणियों के पास धन जमा किये जाने के उल्लेख मिलते है। गुप्तकाल में भी लोग श्रेणियों में धन जमा किया करते थे। स्कन्दगुप्त के शासनकाल (465 ई0) के इन्दौर ताम्रपत्र लेख से ज्ञात होता है कि इन्द्रपुर की तैलिक श्रेणी में धन इसलिए जमा

किया गया था कि उसके ब्याज से सूर्य मन्दिर में एक दीपक जलता रहे। अनेक लेखों से प्रमाण मिलते है कि गुप्तकाल में श्रेणियों को शासकीय अधिकार भी मिले हुए थे और उनकी स्वयं की मुद्राएँ थी। अभिलेखों में अनेक प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्रों और मार्गों की भी चर्चा हुई है।

अभिलेखों से दक्षिण–भारतीय व्यापारियों की सामुदयिक गतिविधियों पर भी प्रकाश पडता है। 725 ई0 राजा विक्रमादित्य के लक्ष्मणेश्वर अभिलेख से ज्ञात होता है कि कुछ श्रेणियाँ ताँबे और काँसे का व्यापार भी करती थी। श्रेणियाँ स्थानीय बैंक और खजाने का कार्य भी करती थी। व्यापारियों के संगठन सामूहिक रूप से दान देकर धार्मिक कार्यों में सहयोग करते थे। कुछ व्यापारिक संगठन अत्यधिक प्रशंसनीय थे–जैसे ''नानादेशतिशैयारतु ऐन्नर्रुवर'' संगठन सर्वाधिक प्रसिद्ध था। यह संगठन जल और स्थल दोनो मार्गों से व्यापार करने वाला था और छः महाद्वीपों के विभिन्न प्रदेशों में जाकर अश्व, हस्ति, रत्न, गन्ध, औषधियाँ तथा अन्य अनेक प्रकार की वस्तुओं का थोक और फुटकर व्यापार करता था।

धार्मिक इतिहास

अभिलेखों के द्वारा धार्मिक इतिहास की जानकारी मिलती है। अशोक के अभिलेखों से उस समय की धार्मिक दशा का ज्ञान प्राप्त होता है। उस समय ब्राह्मण, आजीवक, श्रमण आदि सम्प्रदायों का अस्तित्व था। अशोक का व्यक्तिगत धर्म बौद्ध था। अशोक के लेखों को धर्मलेख भी कहा गया है, क्योंकि उसके अभिलेख धम्म और उसके स्वरूप पर विस्तार से प्रकाश डालते है।

अशोक बौद्ध धर्मानुयायी था, इसे प्रमाणित करने वाले अनेक अभिलेख है। भाब्रू अभिलेख इस संदर्भ में विशेष महत्वपूर्ण है। इस अभिलेख में अशोक ने बुद्ध, धम्म और संघ के प्रति अपनी श्रद्धा और निष्ठा व्यक्त करने के साथ ही सद्धर्म को चिरस्थायी बनाने के लिए भिक्षु और भिक्षुणियों के अध्ययन मनन के लिए उपयोगी बौद्ध ग्रन्थों का भी उल्लेख किया है। इन ग्रन्थों के उल्लेख से अशोक की धार्मिक दृष्टि का पता चलता है। क्योंकि इन ग्रन्थों में बौद्ध दर्शन या कर्मकाण्ड का वर्णन न होकर शील और सदचारपरक सार्वभौम सिद्धन्तों का उल्लेख है। सारनाथ, प्रयाग और साँची के स्तम्भ लेख अशोक को बौद्ध धर्म का संरक्षक सिद्ध करते है, क्योंकि इन अभिलेखों में अशोक ने अपने महामात्रों के नाम राजाज्ञा भेजी है कि बौद्ध संघ के भेद उत्पन्न करने वाले व्यक्तियों का धार्मिक बहिष्कार कर दिया जाय। अभिलेखों से अशोक द्वारा जनहित में किये गये धार्मिक कार्यों का भी ज्ञान प्राप्त होता है, जैसे–छायादार वृक्ष लगाना, प्याऊ खुलवाना, कुएँ खुदवाना, विश्रामगृह बनवाना, जीव हिंसा पर रोक लगाना आदि।

गुप्तकाल के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि गुप्तकाल में वैष्णव धर्म को राजधर्म की प्रतिष्ठा प्राप्त थी। गुप्त नरेश वैष्णव, परमभागवत की उपाधि धारण करते थे। विष्णु का वाहन गरूड गुप्त शासकों का ध्वजचिन्ह था। धर्म के प्रति गुप्तशासक सहिष्णु और उदार थे, इसके प्रमाण अभिलेखों से प्राप्त होते है। कुमारगुप्त से अनेक अभिलेख इस बात के साक्षी है कि उसने अपने काल में बुद्ध, शिव, सूर्य आदि देवताओं की उपासना पर भी ध्यान दिया और इन देवताओं के उपासकों को पर्याप्त प्रोत्साहन भी दिया। करमदण्डा लेख से पता चलता है कि उसका राज्यपाल पृथिवीषेण शैव मतानुयायीं था। मन्दसोर लेख के अनुसार पश्चिमी मालवा में उसके राज्यपाल बन्धुवर्मा ने सूर्य मन्दिर का निर्माण करवाया था। इन्दौर (गुप्त संवत् 146–465 ई0) के ताम्रपत्र लेख में सूर्य मन्दिर में दीपक जलाये जाने के लिए धनदान दिये जाने का विवरण है। कहौम (गुप्त संवत् 141–460ई0) के स्तम्भ लेख से पता चलता है कि मद्र नामक एक व्यक्ति ने पाँच जैन तीर्थकरों की प्रतिमाओं का निर्माण करवाया था।

पाल–अभिलेखों से पालशासकों का बौद्ध धर्मावलम्बी होना ज्ञात होता है। हेलियोडोरस का विदिशा अभिलेख विदेशियों के वैष्णव धर्म में दीक्षित होने का वर्णन करता है। यह अभिलेख संयम, त्याग, और अप्रमाद को स्वर्ग ले जाने वाला अमृतपथ बतलाता है।

शिक्षा–अभिलेखों से शिक्षण संबंधी जानकारी प्राप्त होती है अभिलेख में नालंदा के महान शिक्षा केंद्र पर कुछ प्रकाश पड़ता है।[11] एक पूर्व मध्ययुगीन की अभिलेख में यहां के बिहारो को गगनचुंबी बताया गया है। इनमें भिक्षु तथा विद्यार्थी निवास करते थे। पाल नरेश देव पाल के ताम्रपत्र लेख से प्रकट होता है[12] कि जावानरेश ने यहां दो बिहार बनवाए थे। काठियावाड़ का वलभी भी शिक्षा का एक विख्यात केंद्र था। यहां का मैत्रक राजवंश साधारण व्यय के अतिरिक्त पुस्तकों के लिए भी विशेष अनुदान देता था।[13] ताम्रपत्रों ओं में प्रायः दानग्रहीता ब्राह्मणों की विद्वता तथा उनके द्वारा अधीन विषयों का वर्णन किया गया है। कनिस्ककालीन सारनाथ, बुद्ध प्रतिमा लेख में भिक्षु के नाम पूर्व त्रैपिटकस्य शब्द उत्कीर्ण है। जिससे पता चलता है कि उस समय त्रिपिटक साहित्य का अध्ययन किया जाता था।

पूर्व मध्यकालीन अभिलेखों से प्रकट होता है कि वेद, वेदांग, दर्शन, उपवेद तथा इतिहास आदि विषयों का अध्ययन किया जाता था। चाहमान अभिलेखों में यजुर्वेद के अनुसार यज्ञ करने का विवरण मिलता है। अतः प्रतीत होता है कि संपूर्ण उत्तर भारत में वेदों का अध्ययन किया जाता था। इस समय के अभिलेखों में वेदों के निम्नांकित शाखाओं का वर्णन मिलता है–

1. ऋग्वेद की शाखाए–आश्वलायन शांखायन
2. शुक्ल यजुर्वेद–माध्यन्दिन, काण्व, वाजसनेय
3. कृष्ण यजुर्वेद–मैत्रायिणी, कठ, तैतिरीय
4. अथर्ववेद–पिप्पलाद

अधिकांश ब्राह्मण तीन वेद पढ़ते थे।[16] बंगाल के अभिलेखों में वेद, वेदांग में निष्णात ब्राह्मणों के नाम मिलते हैं[17] गोविंदपुर ताम्रपत्र[18] में वेदांत के छह विषयों का उल्लेख मिलता है अध्ययन के विषयों में षडदर्शन–न्याय, मीमांसा, योग, वैशेषिक और वेदांत प्रचलित थे[19] उपवेदों में गांधर्ववेद, आयुर्वेद, धनुर्वेद का वर्णन मिलता है। प्रयाग प्रशस्ति[20] में समुद्रगुप्त को गंधर्व विद्या में नारद और तुम्बुर को लज्जित करने वाला कहा गया है। कुमार गुप्तकालीन मंदसौर अभिलेख[21] के अनुसार पट्टवाय श्रेणी के लोग गंधर्व वेद तथा धनुर्विद्या में पांरगत थे। प्रयाग प्रशस्ति[22] में परशु–शर–शंवु आदि शस्त्राओं का उल्लेख मिलता है। चंदेल अभिलेखों[23] में वैध और पाल लेखों में भैषज्य[24] शब्दों के प्रयोग से प्रमाणित होता है कि वेद आयुर्वेदिक पद्धति से चिकित्सा करते थे।

साहित्यिक महत्व

सहित्यिक गतिविधियों की सूचना की दृष्टि से भी अभिलेखों का महत्वपूर्ण स्थान है। अभिलेखों से प्राचीन भाषाओं और लिपियों का ज्ञान प्राप्त होता है। प्राचीन भारतीय अभिलेखों की प्रमुख भाषा पालि, प्राकृत, संस्कृत, तमिल, तेलगू, कन्नड आदि है। ब्राह्मी प्राचीन भारतीय अभिलेखों की प्रमुख लिपि थी। कुछ समय के लिए पश्चिमोत्तर भारत में खरोष्ठी लिपि का प्रचलन रहा। अशोक के शहबाजगढी और मानसेहरा अभिलेख तथा कुषाण राजाओं के कुछ अभिलेख खरोष्ठी लिपि में है। अशोक के अभिलेखों की भाषा पालि–प्राकृत है। संस्कृत भाषा में गुप्त, चालुक्य प्रतिहारवंश, वर्धन आदि वंशो के अभिलेख प्राप्त है। कुछ अभिलेख साहित्यिक दृष्टि से विशिष्ट महत्व के है, जैसे–पुलकेशिन द्वितीय का एहोल अभिलेख। शुद्ध साहित्यिक संस्कृत में लिखा हुआ यह अभिलेखा उत्कृष्ट काव्य का उदाहरण प्रस्तुत करता है। उपमा, रूपक, अनुप्रास, यमक, अतिशयोक्ति आदि अंलकारों की भरमार है। ऐसी रचना शैली पर भारवि एवं कालिदास का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

रूद्रदामन का जूनागढ अभिलेख तत्कालीन संस्कृत गद्य शैली के विकास का प्रमाण है। प्रो0 गुर्ती ने इस लेख को भाषा की दृष्टि से प्राकृत के समुद्र में एक टापू के समान कहा है। समुद्रगुप्त की प्रयाग–प्रशस्ति चम्पू (गद्य–पद्य मिश्रित) शैली में लिखी गयी है। इसका प्रारम्भिक भाग पद्य में और उत्तर भाग गद्य में लिखा गया है। इसके श्लोक मन्दक्रान्ता, स्रग्धरा और शार्दूल विक्रीडित छन्दों में लिखे गये है। इसकी गद्य शैली की तुलना बाणभट्ट की गौडी

शैली से की जा सकती है। कुमारगुप्त और बन्धुवर्मन का मन्दसौर अभिलेख की उच्चकोटि की साहित्यिक रचना का उदाहरण है। इसकी काव्य–शैली कालिदास की वैदर्भी रीति से प्रभावित है। इसकी रचना साहित्यिक परम्परानुसार स्तुति से आरम्भ की गयी है। सुन्दर उपमा, रूपक और अतिशयोक्ति अलंकारों की छटा स्थान–स्थान पर दर्शनीय है। पौष और फाल्गुन मास के मनोहरी वर्णन है। वसन्ततिलका, आर्या, मालिनी, वंशस्थ, उपजाति, अनुष्टप्, मन्दाक्रान्ता, इन्द्रवज्रा, द्रुतविलम्बित आदि छन्दों का प्रयोग हुआ ळें कुछ अभिलेखों मे संस्कृत नाटकों के अंश भी प्राप्त हुए है। अजमेर की 'अढाई दिन का झोपडा' नामक मस्जिद में ललित विग्रहराज की 75 पंक्तियाँ और एक अन्य अभिलेख में विग्रहराज द्वारा रचित 'हरिकेलि' की 81 पंक्तियाँ उल्लिखित है। तमिलनाडु से प्राप्त एक अभिलेख में संगीतशास्त्र का उल्लेख मिलता है।

अन्तर्राष्ट्रीय महत्व

अभिलेखों से भारत के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का भी ज्ञान प्राप्त होता है। कुछ अभिलेख भारत से बाहर अर्थात् विदेशो में भी प्राप्त हुए है, जिनसे भारतीय इतिहास के बारे में जानकारी मिलती हैं। एशिया माइनर में बोगाजकोई नामक स्थान से 1400 ई0 पू0 का एक अभिलेख मिला है, जो आर्यों के इतिहास पर प्रकाश डालने वाला प्राचीनतम साक्ष्य है। इस अभिलेख में मित्र, वरूण, इन्द्र और नासात्य जैसे वैदिक देवताओं का उल्लेख है। पार्सिपोलेस तथा नक्शेरूस्तम के अभिलेखों प्राचीन भारत तथा ईरान के पारस्पारिक सम्बन्धों का उल्लेख मिलता है।

अशोक के चतुर्दश शिलालेख में विदेशी राज्यों और उनके नरेशो के नाम अंकित है, जो इस बात का प्रमाण है कि अशोक के उनसे सम्बन्ध थे। बेसनगर में गरूणध्वज स्तम्भ लेख (प्रथम शताब्दी ई0 पूर्व) से ज्ञात होता है कि इण्डोयूनानी राजा ऐण्टअलक्डिस के राजदूत हेलियोसेडोरस ने विदिशा में विष्णु की पूजा के लिए गरूडध्वज स्थापित कराया था। यह अभिलेख इण्डोयूनानी शासकों और शुंग राजाओं के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध को प्रकट करता है। मीनेण्डर के ताम्रमुद्राओं से पता चलता है कि भारत का सम्बन्ध इण्डोयुनानी राजाओं के साथ था।

निष्कर्ष

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि भारतीय इतिहास के अध्ययन की दृष्टि से अभिलेख अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनके विषय में रैप्सन का यह कथन उचित ही है कि अभिलेख अपने देश और समय की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक दशा के विषय में अत्यधिक मूल्यवान सामग्री प्रस्तुत करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. एपि0 इण्डि0, खण्ड 20 पृ0 43
2. वही, खण्ड 17, पृ0 323
3. सा0 इ0इं0 खण्ड 7, पृ0 67
4. से0 इ0, खण्ड–1, पृ0 136–37
5. एपि0 इण्डि खण्ड–9, पृ0–306
6. वही, खण्ड–16, पृ0–10, खण्ड–1, पृ0– 311
7. इण्डि0 एण्टि0, खण्ड–16, पृ0–205
8. एपि0 इण्डि0, खण्ड–2, पृ0–336
9. वही, खण्ड–11 पृ0–311
10. से0इं0, खण्ड–1 पृ0–267
11. वही, पृ0–302
12. वही, पृष्ठ–264
13. इपि0 इण्डिया खण्ड–4–पृ0–170
14. इण्डि0 एण्टि0 खण्ड–15, पृ0–306